"बिहारी का संयोग वर्णन"

रीतिसिद्ध कवि बिहारी शृंगार के रससिद्ध कवि हैं। शृंगार रस के दो भेद हैं— संयोग शृंगार और विप्रलम्भ शृंगार। हिन्दी साहित्य में इसी सम्भोग को संयोग तथा विप्रलम्भ को वियोग शृंगार के नाम से जाना जाता है। रीतिकालीन कवियों के शृंगार वर्णन के कारण ही रीतिकाल को विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने 'शृंगारकाल' कहा है। इस काल के कवियों ने संयोग शृंगार का वर्णन करते हुए विभिन्न क्रीड़ा व्यापारों, काम-चेष्टाओं, अठखेलियों, रति-केलियों, नायिका का रूप-सौन्दर्य चित्रण, नायिका भेद, दूत-दूती संदेश प्रेषण, हास-परिहास, क्रीड़ा-केलियों जैसे- जल-विहार, वन-विहार, उपवन में आँखमिचौनी, फाग खेलना, पतंगबाजी, कबूतरबाजी आदि का वर्णन किया है। बिहारी ने इन सभी वर्णनों में तो कमाल ही कर दिया है। बिहारी के दोहों में संयोग शृंगार की विभिन्न क्रीड़ाओं, चेष्टाओं, व्यापारों, मनोवृत्तियों, हाव-भावों आदि का बड़ा ही सजीव एवं मनमोहक वर्णन मिलता है। ये समस्त बाह्य व्यापार और बाह्य चेष्टाएँ दो वर्गों में विभक्त हैं— हाव एवं अनुभाव। सचेष्ट व्यापार को 'हाव' एवं सहज एवं स्वाभाविक चेष्टाओं को 'अनुभाव' कहते हैं। 'हाव' का चित्रण निम्न दोहे में द्रष्टव्य है—

"बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाइ।
सौंह करैं भौंहनु हँसैं, दैन कहैं नटि जाइ॥"

यहाँ पर सौंह करना, भौंहों में हँसना, देने के लिए

कहना, नट जाना आदि सभी बाह्य व्यापार किसी विशेष उद्देश्य से चेष्टापूर्वक हुए हैं। वार्तालाप के लालच में राधा ने कृष्ण की मुरली छिपाकर रख दी है। जब कृष्ण मुरली माँगते हैं, तो वह सौगन्ध खाकर कहती है कि मैंने तुम्हारी मुरली नहीं ली, किन्तु कृष्ण समझ जाते हैं कि मुरली इसी के पास है क्योंकि राधा अपनी भौंहों में ही चतुरता से मुस्काती है।

नायिका के सहज एवं स्वाभाविक व्यापार सम्पन्न 'अनुभाव' का वर्णन बिहारी सजीव एवं सरस रूप में किया है, जिसमें नायिका के नायक के हाथ का स्पर्श होते ही उसका पूरा शरीर पसीना से तर-बतर हो जाता है एवं रोमांच का अनुभव होने लगता है—

"स्वेद-सलिल रोमांच-कुस-गहि दुलही अरु नाथ।
हियो दियो सँग हाथ के हथलेवा ही हाथ॥"

संयोग काल की ऐसी कोई स्थिति नहीं है, जिस पर बिहारी की नजर न गयी हो। बिहारी रूप-सौन्दर्य की सत्ता 'आत्मगत' मानते हैं 'वस्तुगत' नहीं। यह तो देखने वाले की दृष्टि है जो किसी चीज को सुन्दर बना देती है। प्रेम में पहली दृष्टि रूप पर पड़ती है। बिहारी रूप-वर्णन में अद्भुत सफलता पाई है। ललाट पर बिन्दी लगाने या कुटिल मुस्काने वालों के मुख पर आ जाने से मुख अद्वितीय सौन्दर्य से सुशोभित हो जाता है, उदाहरण प्रस्तुत है—

"कहत सबै बेंदी दिये आँक दसगुनो होत।
तिय लिलार बेंदी दिये, अगनित बढ़त उदोत॥"

बिहारी का मानना है कि सौन्दर्य की इतनी

प्रतिपल परिवर्तित होती रहती है, यही सौन्दर्य की नवीनता है और इसी कारण वह कभी पुराना नहीं होता। नायिका के सौन्दर्य का चित्रण बड़े-बड़े चित्रकारों करने का प्रयास किया है, परन्तु तस्वीर बनने के बाद उसमें बहुत कुछ परिवर्तन हो जाता है-

"लिखन बैठि जाकी सबी गहि-गहि गरब गरूर।
भए न केते जगत के चतुर चितेरे कूर॥"

बिहारी ने संयोग शृंगार के अन्तर्गत नायिकाओं के अभिसार का बड़ा ही मनमोहक वर्णन किया है। वे शुक्लाभिसारिका का वर्णन करते कहते हैं—

"जुवति जोन्ह में मिली गई नैंकु न होति लखाइ।
सौंधे कैं डोरैं, लगी अली चली सँग जाइ॥"

यहाँ पर गौर वर्ण की नायिका चाँदनी में ऐसी मिल गई है कि अभिसार को जाती हुई वह किसी को भी दिखाई नहीं पड़ती। उसके साथ चल रही उसकी सखी केवल उसके शरीर के सुगन्ध के सहारे चल रही है। ऐसे ही कृष्णाभिसारिका के अभिसार का वर्णन करते हुए अभिसार के बाद लौटने पर रास्ते में चन्द्रमा के निकल आने से उत्पन्न उसकी घबराहट, छिपने की कुशलता, प्रेम-प्रवणता, कामातुरता आदि का बड़ा मनमोहक चित्रण बिहारी ने किया है—

"अरी खरी सटपट परी बिधु आधैं मग हेरि।
संग लगे मधुपनि लई भागनु गली अँधेरि॥"

बिहारी ने संयोग शृंगार का वर्णन करते हुए रति-क्रीड़ा का बहुत कामोद्दीपक वर्णन किया है। कोई नायिका अपने प्रथम समागम के अवसर पर नायक को भौंहों से डाँटती हुई, मुख से निषेध

(नचाती) हुई, किन्तु आँखों से मिलन की इच्छा प्रकट करती हुई तथा खींचातानी में स्वयं नायक की ओर खिंचती चली आती है —

"भौंहनु त्रासति मुँह नटति, आँखिन सौं लपटाति।
ऐंचि छुड़ावति कर तरुनि, आगैं आवति जाति॥"

यही नहीं बिहारी ने तो रति में नागन, नमन, हँसी, सिसक, मसक, झपट, लपटानि आदि क्रियाओं को रति मुक्ति जैसी परमानन्ददायिनी बताया है, उसके सम्मुख अन्य मुक्तियाँ व्यर्थ हैं —

"नागन, नमन, हँसी, ससक, मसक, झपट, लपटानि।
ए जिहिं रति सो रति मुकति और मुकति अति हानि॥"

नायिका के नेत्रों का वर्णन करते हुए बिहारी कहते हैं नायिका के नेत्र शृंगार रस में स्नान किये हुए हैं, उनमें से शृंगार रस टपक रहा है। वे नेत्र अपनी स्वाभाविक कालिमा से ऐसे काले हैं कि बिना काजल लगाए हुए भी वे खंजन पक्षी को लज्जित कर रहे हैं —

"रस सिंगार मंजनु किए कंजनु भंजनु दैन।
अंजनु रंजनु हू बिना खंजन गंजन नैन॥"

इतना ही नहीं इससे एक कदम और आगे बढ़कर बिहारी ने नेत्रों का सौन्दर्य प्रस्तुत करते हुए कहा है कि युवावस्था में प्रायः सभी तरुणियों के नेत्र नुकीले एवं बड़े-बड़े हो जाते हैं, किन्तु दृष्टि निरपेक्ष कला तो किसी-किसी में ही होती है —

"अनियारे दीरघ दृगनि किती न तरुनि समान।
वह चितवनि औरै कछू जिहिं बस होत सुजान॥"

बिहारी की मान्यता है कि सौन्दर्य का प्राण तो प्रेम है। सौन्दर्य की सार्थकता प्रेम भरी दृष्टि से

है। यदि सुन्दरता को कोई प्रेम भरी दृष्टि से नहीं देखता तो उस सौन्दर्य की सार्थकता पर सवालिया निशान लग जाता है। शरीर उतनी ही शोभा धारण करता है जितना प्रेम उसके प्रति रहता है —

"जद्यपि सुन्दर, सुघर पुनि, सगुनौं दीपक देह।
तऊ प्रकासु करै तितौ, भरियै जितौ सनेह॥"

वस्तुतः निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि बिहारी ने संयोग श्रृंगार का बड़ा ही कामोद्दीपक, भावोत्तेजक, मनोरंजक, मनमोहक एवं वासनात्मक वर्णन किया है। बिहारी ने सुन्दरता को देखकर उसका वर्णन इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि वह दूसरों को भी चित्ताकर्षक लगे। इसलिए यह कहना उचित होगा कि बिहारी संयोग श्रृंगार वर्णन में पूर्णरूप से सफल हुए हैं।

डॉ० राकेश कुमार
हिन्दी विभाग
शेरशाह महाविद्यालय, सासाराम, रोहतास